नृत्य, नाटक का विकास एवं सीता बेंगरा

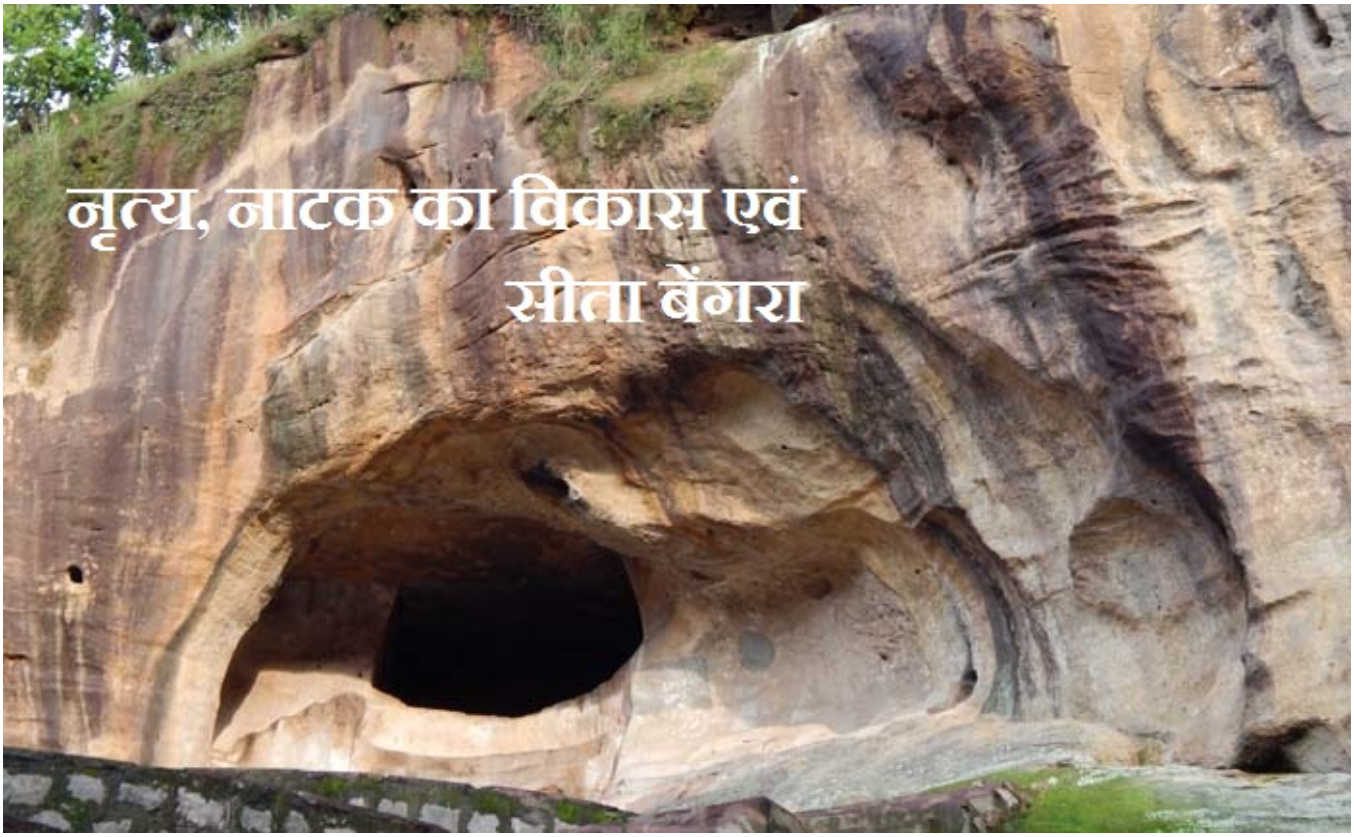

- लेखक : ललित शर्मा
- तारीख : July 19, 2022

मानव जीवन में नृत्य, अभिनय का महत्व हमें आदिमानवों की शरणस्थली शैलाश्रयों में चित्रित शैलचित्रों से ज्ञात होता है। हजारों हजार साल प्राचीन शैलचित्रों में आदिमानवों ने अपनी कला बिखेरते हुए तत्कालीन समय की गतिविधियों को चित्रित किया, जिससे हमें वर्तमान में उनके जीवन के विषय में ज्ञाता होता है। वे उल्लास व्यक्त करने के लिए लय ताल में एकल और सामुहिक नृत्य एवं अभिनय करते थे। यह लयात्मकता उनके थिरकते शैलचित्रों से ज्ञात होती है। इन शैलचित्रों से ज्ञात होता है कि मनुष्य द्वारा किए जाने वाले नृत्य एवं अभिनय का इतिहास लगभग 30 हजार वर्ष से भी पुराना है। ये शैलचित्र छत्तीसगढ़ से लेकर उत्तर प्रदेश के मिर्जापुर में भी प्राप्त होते हैं।

सभ्यता के विकास के क्रम में नृत्य एवं नृत्यनाटिका व्यवस्थित हुई, कुछ लोग कला को ही समर्पित हुए तथा कला साधना के साथ नये नृत्य एवं नाटकों के नये आयाम विकसित हुए। आदिम नृत्यों को तराशकर शास्त्रीय नृत्य अभिनय का रुप दिया जाने लगा। कथाओं के साथ उनके अभिनय का दौर प्रारंभ हुआ। संस्कृत काल में विभिन्न जन आदर्शों को जनमानस तक पहुंचाने के लिए नाटक लिखे जाने लगे। जिनमें संस्कृत के नाट्यलेखकों में भरतमुनि, महाकवि भास, शुद्रक, कालीदास, भवभूति, राजशेखर, अभिनव गुप्त, विशाखदत्त, भट्टनारायण, पाणिनी, रसगंधर्व आदि प्रमुख हैं।

स्थापत्य की शैली विकसित हुई तथा उसमें नाट्यमंचों को भी स्थान मिला, जिसे वर्तमान में थियेटर कहा जाता है। कला को समर्पित लोग इस निश्चित स्थान पर अपनी कला का प्रदर्शन करते थे। हम देखते हैं कि प्राचीन काल में राज दरबारों में इन कलाकारों को स्थान एवं सम्मान मिला। विशिष्ट जनों एवं आम जनों के मनोरंजन के लिए नृत्य एवं नाटक प्रदर्शित किए जाने लगे।

कालांतर में 9वीं 10वीं शताब्दी में इन्हें मंदिर स्थापत्य कला के साथ जोड़ दिया गया एवं हम देखते हैं कि भारत के बहुतेरे मंदिरों के शिल्प स्थापत्य में नाट मण्डप भी बनाए जाने लगे। दक्षिण के मदिरों में नृत्य अभिनय शालाएं दिखाई देती हैं। पल्लव नरेश ने छठवीं शताब्दी में चिदम्बरम में शिवालय का निर्माण कराया। इस मंदिर में शिवलिंग की अपेक्षा शिवजी की नृत्यमुद्रा में प्रतिमा स्थापित है। शिल्पकला की दृष्टि से नटराज शिव के इस मंदिर का अत्यंत महत्व है, इसमें निर्मित छप्पन कलायुक्त स्तंभों की नाट्यशाला प्रसिद्ध है। कोणार्क के प्रसिद्ध सूर्य मंदिर में नाट मण्डप का निर्माण किया गया, विजय नगर राज्य हम्पी में उत्सव आदि के लिए महानवमी डिबा नामक विशाल रंगमंच दिखाई देता है। इसी तरह अन्य स्थानों पर भी मंदिरों में नाट मण्डप दिखाई देते हैं।

कला का उत्कृष्ट रुप काव्य है तथा उत्कृष्टम रुप है नाटक, जिसका प्रतिपादक सर्वप्राचीन ग्रंथ भरतमुनि का नाट्यशास्त्र है। यह महानग्रंथ नाट्यकला के अतिरिक्त काव्य, नृत्य, शिल्प तथा अन्य ललित कलाओं आदि अनुषांगिक विषयों का भी कोष है। इस ग्रंथ में नाटक के सभी अंगों का गहन चिंतन करने के पश्चात अभिलेखीकरण किया गया है। यहा ग्रंथ विश्व के रंगमंच का मुलाधार माना जा सकता है। भरत मुनि ने अपने ग्रंथ में नाट्यशालाओं के निर्माण की विधि भी लिखी है, जिसमें भिन्न-भिन्न प्रकार की नाट्यशालाएं बनाए जाने का उल्लेख है।

परतंत्रताकाल में भारत के इतिहास को बहुत ही अधिक तोड़ मरोड़कर प्रस्तुत किया गया और लेखन किया गया, जो कि भारत की प्राचीन सभ्यता एवं वैभव को मलीन करने का सोचा समझा प्रयास दिखाई देता है। भारत में नाट्यकला की प्राचीन एवं वैभवशाली परम्परा है, जो कि भरतमुनि के नाट्यशास्त्र से प्रकट होती है, जिसमें नाटक के सभी पहलुओं का सुक्ष्मता से वर्णन किया गया है। इससे ज्ञात होता है कि विश्व का प्रथम नाटक भी किसी भारतीय भाषा में ही लिखा गया होगा। परन्तु पश्चिम का अंधानुकरण करने वालों को सार्त्र, शेक्सपियर, शॉ, इब्सन, चेखव इत्यादि ही दिखाई देते हैं, भरतमुनि, महाकवि भास, शुद्रक, कालीदास, भवभूति, राजशेखर, अभिनव गुप्त, विशाखदत्त, भट्टनारायण, पाणिनी, रसगंधर्व आदि दिखाई नहीं देते।

इसके साथ ही जब रंगमंच की चर्चा होती है तो ग्रीक, रोमन, फ्रेंच एवं ब्रिटिश रंगमंच ही दिखाई देता है। जबकि इन्हें ज्ञात होना चाहिए कि संभवत: विश्व की प्रथम नाट्यशाला भारत में ही स्थित है। यह प्राचीन नाट्यशाला छत्तीसगढ़ प्रदेश की राजधानी रायपुर से अम्बिकापुर मार्ग पर स्थित उदयपुर के समीप रामगिरि पर्वत की गुफ़ा है। दण्डकारण्य के प्रवेश द्वार स्थिति समुद्र तल से 3,202 फ़ीट की ऊंचाई पर अद्वितीय प्राकृतिक वैभव के साथ प्राचीन इतिहास एवं संस्कृति को अपने आप में संजोए यह सदियों से अटल है। यहाँ घने शीतल छायादार वृक्षों की शीतलता से युक्त विश्व का चिरंतन नाट्य तीर्थ "शैलगुहाकार नाट्यमण्डप" का एकमात्र जीवंत अवशेष है। यहीं रामायण कालीन ऋषि शरभंग का आश्रम माना गया है। यहां सीताबेंगरा एवं जोगीमाड़ा नामक प्राचीन गुफ़ाए हैं। भगवान रामचंद्र के वनवास का कुछ काल माता सीता के साथ रामगढ़ पर्वत की गुफ़ा में निवास करने के कारण उत्तरी गुफ़ा को सीता बेंगरा का नाम दिया गया। सीताबेंगरा एवं जोगीमाड़ा नामक इस गुफ़ा में ब्राह्मी के अभिलेख भी मिलते हैं। जिससे सीधे तौर प्रमाण मिलता है कि यह लिपि दूसरी से चौथी शताब्दी ईसापूर्व की है। जब अभिलेख इस काल के है तो यह तय है कि गुफ़ा का निर्माण इस काल से पूर्व में हुआ होगा।

भरत मुनि के नाट्य-शास्त्र में रंगशाला के निर्माण के संबंध में विस्तृत रूप से बताया गया है। जिस ढंग के नाट्य-मंदिरों का उल्लेख प्राचीन अभिलेखों में मिलता है, उससे जान पड़ता है कि पर्वतों की गुफाओं में खोद कर बनाये जाने वाले मंदिरों के ढंग पर ही नगर की रंगशालाएँ बनती थीं। **कार्यः शैलगुहाकारी द्विभूमिर्नाट्यमंडपः** से यह कहा जा सकता है कि नाट्य-मंदिर दो खंड के बनते थे, और वे प्रायः इस तरह के बनाए जाते थे जिससे उन का प्रदर्शन विमान का सा हो। शिल्प-संबंधी शास्त्रों में प्रायः द्विभूमिक, दोखंडे या तीनखंडे प्रासादों को, जो कि स्तंभों के आधार पर अनेक आकारों के बनते थे, विमान कहते हैं।

सीताबेंगरा गुफ़ा भी इसी तरह से निर्मित है, इसके दूसरे खंड को जोगीमाड़ा कहा जाता है। विद्वानों का मत है कि कवि कुलगुरु महाकवि कालिदास ने यहीं मेघदूत की रचना की थी। दक्षिणी गुफ़ा जोगीमाड़ा में मेघदूत का यक्ष निर्वासित था। जोगीमाड़ा गुफ़ा में भित्तिचित्रों के प्राचीन प्रमाण उत्कीर्ण हैं। विद्वान इनका काल ईसा पूर्व तीसरी शताब्दी मानते हैं। ये भित्ती

चित्र अजंता एलोरा की गुफ़ाओं में उत्कीर्ण भित्तीचित्रों जैसे ही हैं जो यहाँ की प्राचीन सांस्कृतिक सम्पन्नता के प्रतीक हैं। इन दोनों ही गुफ़ाओं में दूसरी शती ईसा पूर्व के अभिलेख उत्कीर्ण हैं। जिसमें से सीता बेंगरा प्राचीन नाट्यशाला है। कर्नल ओसले ने सन् 1843 में तथा जर्मन विद्वान डॉ ब्लॉख ने इसे 1904 में जर्मन जर्नल में प्रकाशित किया था। इसके पश्चात डॉ बर्जेस ने इंडियन एंटीक्वेरी में इसको विस्तार से वर्णित किया।

प्राचीन काल में सीता बेंगरा गुफ़ा पर्वत काट कर बनाई गई है। 44 फ़ीट लम्बी और 15 फ़ीट चौड़ी सीता बेंगरा गुफ़ा के प्रवेश द्वार के समीप दाहिनी ओर श्री राम चरण चिन्ह उत्कीर्ण हैं। इसके मुख्यद्वार के समक्ष शिला निर्मित चंद्राकार सोपान जैसी बाहर की ओर संयोजित पीठिकाएं है। प्रवेश द्वार के समीप भूमि में खम्भे गाड़ने के लिए दो छिद्र् बनाए गए हैं। इस गुफ़ा का प्रवेश द्वार पश्चिम की ओर है एवं पूर्व में पहाड़ी है। विद्वानों कि अवधारणा है कि भारतीय नाट्य के इस आदिमंच के आधार पर ही भरतमुनि ने अपने ग्रंथ में गुफ़ाकृति नाट्यमंडप को स्थान दिया होगा- कार्य: शैलगुहाकारो द्विभूमिर्नाट्यमण्डप:।

सीताबेंगरा गुफ़ा के प्रवेश करने पर बाएं तरफ़ ब्राह्मी लिपि मागधी भाषा में 3 फ़ीट 8 इंच के दो पंक्तियों के लेख से इस स्थान पर राष्ट्रीय स्तर के कवि सम्मेलन होना पहला शिलालेखिय प्रमाण माना जाता है। प्रो व्ही के परांजपे की "ए फ़्रेश लाईट ऑन मेघदूत के अनुसार यह शिलालेख निम्नानुसार है "आदि पयंति हृदयं सभावगरु कवयो ये रातयं... दुले वसंतिया! हसवानुभूते कुद स्पीतं एवं अलगेति" अर्थात हृदय को आलोकित करते हैं। स्वभाव से महान ऐसे कविगण रात्रि में... वासंती दूर है। संवेदित क्षणों में कुंद पुष्पों की मोटी माला को ही आलिंगित करता है।

जोगीमाड़ा गुफ़ा में ब्राह्मी लिपि में शिलालेख अंकित है जिससे सुतनुका तथा उसके प्रेमी देवदीन के बारे में पता चलता है। जोगीमाड़ा गुफ़ा की उत्तरी भित्ती पर उत्कीर्ण पांच पंक्तियाँ है - शुतनुक नम। देवदार्शक्यि। शुतनुकम। देवदार्शक्यि। तं कमयिथ वलन शेये। देवदिने नम। लुपदखे। अर्थात सुतनुका नाम की देवदासी (के विषय में) सुतनुका नाम की देवदासी को प्रेमासक्त किया। वरुण के उपासक (बनारस निवासी) श्रेष्ठ देवदीन नाम के रुपदक्ष ने। इससे प्रतीत होता है कि जोगीमाड़ा गुफ़ा की नायिका सुतनुका है। आचार्य कृष्णदत्त वाजपेयी के अनुसार भित्तिलेख से यह ध्वनि निकलती है कि सुतनुका नाम की नर्तकी थी, जिसके लिए देवदासी एवं रुपदर्शिका इन दो शब्दों का प्रयोग किया गया है। इसके प्रेमी का नाम देवदत्त था। संभवत: देवदत्त द्वारा गुफ़ाओं में उक्त लेख अंकित कराए गए, ताकि उस स्थान पर उसकी नाट्य-प्रिया सुतनुका का नाम अजर-अमर हो जाए।

जोगीमाड़ा गुफ़ा में यक्ष का निवास था। यहाँ प्राकृतिक रंगों से उत्कीर्ण चित्रकला ऐतिहासिक महत्व रखती है। यक्ष के इस प्रवास कक्ष में प्राचीनतम भित्तीचित्र आज भी प्राचीन कला एवं संस्कृति का स्मरण कराते हैं। एक ओर पुष्पों एवं पल्लव तोरणों की पृष्ठ भूमि में तीन अश्वों से खींचा जाता रथ है और दूसरी ओर रंग बिरंगी मछलियाँ चित्रित हैं। मानवीय आकृतियों के साथ सामुहिक नृत्य संगीत के साथ उत्सव मनाते हुए लाल, काले एवं सफ़ेद रंग से रेखांकित चित्र जोगीमारा गुफ़ा में जीवंत दिखाई देते हैं। इन चित्रों को विद्वानों ने ईसा पूर्व तीसरी शताब्दी का माना है। डॉ हीरालाल इन भित्तीचित्रों को बौद्ध धर्म से संबंधित मानते हैं तथा रायकृष्णदास इन्हे जैन धर्म से संबंधित कहते हैं क्योंकि पद्मासन में एक व्यक्ति की आकृति चित्रित है एवं इन्हे कलिंग नरेश खारवेल का बनवाया मानते हैं। जैन मुनि कांति सागर ने इस गुफ़ा के कुछ चित्रों का विषय जैन धर्म से संबंधित माना है।

महामहोपाध्याय डॉ भास्कराचार्य जी अपने लेख "रामगढ़ में त्रेतायुग की नाट्य शाला" में लिखते हैं कि "रामगढ़ पर्वत प्राकृतिक सुषमा से सम्पन्न रामायण एवं महाभारत कालीन अवशेषों का ही धनी नहीं है वरन छत्तीसगढ़ के प्रसिद्ध ऐतिहासिक स्थलों में सर्वाधिक प्राचीन भी है। रामगढ़ की पहाड़ी पर स्थित प्राचीन मंदिर, गुफ़ाओं एवं भित्ती चित्रों से सुसम्पन्न प्राचीन भारतीय संस्कृति का आभास आभास मिलता है। सात परकोटों के भग्नावेश देख कर सहज ही विश्वास होता है कि यह ब्रह्मभवनप्रख्य शरभंगाश्रम रहा होगा।“

डॉ भास्कराचार्य जी “रघुपतिपदैरंकितं मेखलासु” में कहते हैं कि मुक्ति प्रदाता दण्डकारण्य के प्रवेशद्वार पर आज भी

त्रेतायुगीन नाट्य शाला अवस्थित है, जिसके समक्ष श्रीराम क पदार्पण होते ही शरभंग आश्रम के कुशल शिल्पियों ने दिवय चरण-चिन्ह छेनियों से उट्टंकित कर सदा के लिए संजो लिए होगें। इन चरण चिन्हों की आराधनाअ से दो हजार वर्ष पूर्व महाकवि कालिदास की काव्य प्रतिभा परवान चढी होगी, तभी रामगिरि की पहचान बताते हुए उन्होने मेघदूत के बारहवें पद्य में कहा है -आपृच्छस्व प्रियसखममुं तुंगमालिंग्य शैलम वन्दैः पुंसां रघुपतिपदैरंकितं मेखलासु। काले काले भवति भवतो यस्य संयोगमेत्य स्नेहव्यक्तिश्चिरविरहजं मुञ्चतो वाष्पमुष्णम्। सीता बेंगरा गुफ़ा में श्रीराम के पदचिन्हों के अंकित होने को स्पष्ट रुप से प्रदर्शित किया है। यक्ष मेघ से कहता है कि मेरे मित्र समय-समय पर इस पर्वत पर आते हो मुझे लगता है जितने दिन अलग रहते हो, उन्ही की याद करके पानी की शक्ल में गरम-गरम आँसू गिराया करते हो।

इस आश्रम का तालमेल रामगढ़ में ही दिखाई देता है। जहाँ सात द्वारों से निर्मित विशाल मंदिर के भग्नावशेष अभी भी शिलालेख के माध्यम से सुतनुका देवदासी का नृत्य सुनाया करते हैं। पास ही थार पर्वत से निकल कर मांड नदी प्रवाहित होती है, जिसका किनारा लेकर राम शरभंग के निर्देशन में आगे बढ़े थे। विद्वानों का मत है कि रामगढ़ की गुफ़ाओं में रहकर ही कालीदास ने मेघदूत की रचना की थी। कालिदास ने अपने मेघदूत में रामगढ़ को रामगिरि कहा है। “वप्रक्रीडापरिणतगजप्रेक्षणीयम” पूर्वमेघ-2 में रामगिरि पर्वत का शिखर विन्यास वप्र क्रीडा करते हुए हाथी जैसा बताया गया है। इससे प्रतीत होता है कि महाकवि कालिदास ने रामगढ से ही मेघदूत की रचना की थी। प्रो परांजपे आदि विद्वानों ने भी यही माना है।

मेघदूत के प्रमाणों का सत्यापन करने के पश्चात विद्वानों ने रामगढ़ पर्वत को ही रामगिरि चिन्हित किया है। इससे सिद्ध होता है कि कालिदास का रामगिरि से गहरा नाता है। यहीं यक्ष ने निवास कर प्रिया को प्रेम का संदेश भेजा था। शरभंग ऋषि का आश्रम एवं भगवान राम एवं सीता का वनवास के दौरान दण्डकारण्य के इस प्रवेश द्वार रामगढ़ में निवास करना इसे त्रेतायुग के साथ जोड़ता है। विश्व की प्राचीन नाट्यशाला हमें संस्कृति की पहचान कराती है तो सीताबेंगरा का शिलालेख राष्ट्रीय स्तर के कवि सम्मेलन का प्रमाण देता है।

जोगीमाड़ा गुफ़ा में उत्कीर्ण शिलालेख से रुपदर्शिका नर्तकी सुतनुका एवं रुपदक्ष देवीदत्त की सहस्त्राब्दियों पुरानी प्रेम कहानी से परिचय होता है। जोगीमाड़ा की गुफ़ा में अंकित भित्तीचित्र बौद्ध एवं जैन धर्म के साथ रामगढ़ का संबंध प्रदर्शित करते हैं तो सरगुजा राज्य में स्थापित रकसेल राजवंश के प्रथम शासक द्वारा रामगढ़ पर्वत पर किला बनाकर 35 वर्षों तक राज करना भी बताते हैं। रामगढ़ स्थित सीताबेंगरा नाट्यशाला विश्व की प्राचीन ज्ञात नाट्यशाला है, कहने में कोई संदेह नहीं है। क्योंकि पुरातात्विक अवशेषों से ज्ञात होता है कि मौर्यकाल एवं उसके पूर्व यह क्षेत्र आबाद रहा होगा एवं दक्षिणापथ मार्ग का प्रमुख केन्द्र भी रहा होगा।

आलेख

ललित शर्मा इण्डोलॉजिस्ट रायपुर, छत्तीसगढ़